// अध्याय तीसरा //

भारतीय नारी और नारी मनोविज्ञान

अनुक्रमणिका

1. भारतीय नारी
   भारतीय संस्कृतीकी महत्ता एवं विशेषताएँ।
2. नारी जातीका क्रमिक विकास
3. हिंदी नाटक तथा नारी चरित्र एवं प्रकार।
4. नारी:-
   नारी मनके पृष्ठभूमिपर
5. भविष्य कालीन नारी ।

१] भारतीय नारी

भारतीय संस्कृतीकी क्षमता एवं विशेषताएँ ।

भारतीय संस्कृतीका अतीत गौरवपूर्ण है । इसकी संस्कृतीका प्रकाश दूर दूर फैला है । विश्वबंधुत्व प्रदर्शन तथा चिरस्थायीत्व इसमें है । जो अक्षुण्ण, अखंड तथा नये नये तत्वोंका समावेश करतो है । भारत का अतीत इसके सन्मानमेंही छिपा है । रामायण महाभारत, गीताके प्रभावसे वह प्रभावित है । सहिष्णुताभावका रहस्य भी बतला है साथ ही साथ इसीमें छिपा है । आत्मा परमात्मा, सर्वशक्तीमान ईश्वरका स्थान एवं सत्य के असीम छागोंमे भी संस्कृती पनपती •।

संस्कृती जो समाजकी संपत्ती है । इसीकी रक्षामें अनेक हाथ हैं जिसमें नारीका हिस्सा अधिक है । नारीजीवनसेही किसीभी देशकी सभ्यता को तौला जाता है । भारतीय नारी उन्नती तथा अवनतिके अनेकस्थानोंका चढ उतार कर आधुनिक [मार्डन] स्थिती पर आई है । भारतीय नारी की सतीत्व तथा पतिपरायण पावनी वृत्तीकी सराहना अखिल जगतमें इसी कारण की गयी है । अन्य एक व्यक्तीका केवल विचार भी जहाँ पाप माना जाता है । इसी देशमें पुतिव्रताकिनीयोंभी है । शीलसंवर्धन, शीलरक्षण एवं शीलज्ञानका येक अमोल विचार यहाँ है । जिसका इसने सप्तपदी से वरण किया । उसीके लिये वह अपना सर्वस्व मिटा देगी । विवाहके छोटेसे सूतमें बँध जाती है । और इच्छा अपेक्षाओंके बावजूदभी इसी पती के लिये "वटसावित्री" से वरदान मांगती है। जनम जनम के फेरोंको अबाधित रखनेके लिये ।

भारतीय नारी, निर्मल, शीतल, अनुकुलताले भरी, धारा है । जिसमें प्रखर राष्ट्रीय भावना निहित है। विश्वबंधुत्व का सुखद स्वप्नभी है । विश्वशांतीका इसका विचार प्रेम और कर्तव्यसेवापर आधारित है । युद्ध एवं अशांतिके वातावरने

आंसुके भीगे आंचालपर
मनका सबकुछ रखना होगा ।
तुमको अपनी स्मितरेखासे
यह संचित लिखना होगा ।

नारीका कर्तव्य यही होता है ।

हंसते फूल, मकरंदके कुछ बूंद गिराकर चले जाते है । मुरझा जाते है । तपती धरतीपर आंसुओंके बूंदसे कुछ मोती बिखरे देते है । विश्वास प्रेम सहनशीलताके कुछ कीरणे भी बिखेर देते है । हरेक उलझन सीपीमें ऐसे मोती सी लगाती है । प्रत्येक पुरुषको महसूस हुयी एक कविता अर्थात नारी । पुरुषके इस जीवनके सपनोंका संगीत अर्थात नारी । नारी पुरुषके लिये और प्रेमके लिये एक प्रेरणा है । उसके उभरे मनको बह-जानेवाली बहती नदीया, सरिता है । फिरभी नारी के बारेमें

आम्ही गाई जातीच्या
नाही आम्हा वाचा ।
"शारदा" नाटक

यह कहा जाता है ।

भारतीय समाजने पुरुष तथा नारी शक्तीको स्वीकार किया है । भारतीय नारीकी शक्ती निराली है । अंग्रेजोंके जमानेमें भारतीय नारी एवं पुरुष ऐसा फर्क था । वह पराधीन थी । दास्य भावनाओंका त्याग करकर उसने समानता पाई । इसीलिये नारीके नूतन व्यक्तीत्वके अंकुरको नये पल्लव फुट आये ।

पौराणिक, ऐतिहासिक, धार्मिक नाटकोंमें सामाजिक नाटकोंमें नारीका चित्रण प्रस्तुत किया जा गया । एक ही व्यक्तीमत्वके अनेक रूप यहाँ दिखे है । वह माता, पत्नी, प्रेमिका, सखी, बहन, इ. विविध भावोंको साकार करती है । जो अत्यंत मूलगामी स्वरूप है । फिरभी सामाजिक रुढियाँ व्यक्तीत्वको उसे दबोचती है । यही दबाव असह्य होनेके

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR

बादमें वह ज्वालामुखी बनती है। भवानी चंडी थी। कालीमाता भी थी। बाह्यतथा अंतरिक विरचलेभी वह टकराती है, संघर्ष करती है। अंतमें यही कहना पड़ता है कि, नारी जीवनमें संघर्ष और समस्याओंका मिलन होता है, सुख भी होता है।

आजतक नारी की ओर देखनेकी दृष्टी सिर्फ दया, प्रेम, सेवा त्याग इ० सद्गुणोंकी मूर्ती समझकर स्वर्गमें विराजित किया। मोह-माया का अंकन समझकर पातालमें ढकेला। या देवी दानवी समझा। पर फिरभी नारी पुरुषकी भाती गुण दोषोसि युक्त मानव है। ना वह ऊंचाई चाहती है ना गहराई। स्वयं समतल मार्गसे अपना नैसर्गिक गुणके मर्यादाओंसे मुक्त करके जीवन प्रवाह प्रवाहित करना चाहती है। अपनी मर्यादायें तथा क्षेत्र सीमा वह भूली नहीं। वह जानती है कि पुरुषके समान अधिकारका अर्थ पुरुषका अंधानुकरण नहीं तो अेक समतल व्यासपीठ। वह दासी नहीं बनना चाहती बाकी जीवन संग्राममें पुरुषोंके कंधेसे कंधा लगाकर लड़नेवाली स्वाभी संगिनी बनना चाहती है।

स्त्री किसका प्रतिक है? उसके व्यक्तित्व विकासका स्वरुप क्या हो? दांपत्यजीवनकी मधुरताके लिये शारिरीक पवित्रता, पतिनिष्ठप्रेम, सेवा, और आत्मसमर्पण क्या ललनाकी जन्तीका ध्येय है? बौध्दीक रूपसे विकासित और आर्थिक रूपसे स्वतंत्र नारी के लिये विवाह ही उपोदय है? यही नारी प्रश्न है। नारी प्रश्न समस्यायें कई प्रकारके है?

1] <u>वीवाह विषयक समस्याएं</u>

अ] बाल विवाह
ब] अनेमल विवाह
क] देवदासी
ड] सामाजिक कुप्रथाएं
इ] विधवाकी समस्या

2) <u>पारिवारिक समस्याएँ</u>

अ) संमिलित परिवारोंके स्थानपर व्यक्तीगत परिवारोंकी समस्या

ब) नई पुरानी पीढीमें संघर्षकी समस्या

क) अनाथ नारियोंकी समस्या

ड) वेश्या समस्या

इ) शैक्षणिक समस्या

ई) यौन पवित्रताकी समस्या

उ) नारी स्वातंत्र्यकी समस्या

ऊ) आर्थिक स्वातंत्र्य परदा पध्दती इ॰

3) <u>अनमेल विवाह समस्या</u>

अ) पत्नी बडी पती छोटा वयोमानका फर्क

ब) पती बडा पत्नी छोटी तथा सुंदर

4) <u>वृध्द पती विवाह समस्या</u>

पत्नी भीतरही भीतर जलमरना ।

5) अतिशीत शिक्षणके पश्चे पढनेके निमित्त विवाह समस्या

6) अंतर जातीय विवाह समस्या

7) कुमारी विवाह समस्या

8) सेक्स समस्या

<u>नारी की व्युत्पत्ती तथा विभिन्न शब्द</u>

अव्यक्त + व्यक्तका मिश्रण याने नारी माना जाता है। नारी वाचक शब्दोंकी भिन्न भिन्न अर्थोंमें उत्पत्ती

<u>स्त्री</u> की है स्त्री शब्द स्त्यै धातुसे बना है। स्त्यै अर्थात लज्जा, सिकुडना, स्त्री को स्त्री इसलिये कहा जाता है कि वह लज्जाती है। स्त्रिय/ स्तायते: अपत्यम् कर्मणि :

नारी

ऋग्वेदमें नारी शब्दही नही है । नारी अर्थात न् + अ + ङीप अर्थात नारी । काम करते समय आदमी हाथ पैर नचाता है । हिलाता ,झुलाता है । इसलिये नरा: मनुष्या: नृत्यान्ति कर्मसु" नरऔर नारी शब्द किये गये है ।

प्रमदा :

हावभावसे हावके भावसे पुरुषको उत्तेजित कर देना रमणीकी नैसर्गिक विशेषता है ।

ललना :

लल् अर्थात इच्छा करना । स्त्रीमें लालसा, इच्छा , चाह, प्रबल होती है । अत: वह ललना कहलाती है ।

महिला :

मह + इलच + आ = महिला मह पूज्य नारी पूजानिया होती है ।

सुंदरी :

सु + उंद = गीला करना + अर -ङीष्ट याने सुंदरी · स्त्रीको सुंदरी कहा जाता है । क्योंकी उसे देखनेसे पुरुषका हृदय गिला हो जाता है । चित्त द्रवित हो जाता है । सुंदरी शब्द ऋग्वेद के "सूनरी" शोभाशाली शब्दका विकसित रूप है । ऋग्वेदमें उषाका वर्णन किया गया है । आभा योषेव सूनयुषा यति प्रभुन्जाति । अर्थात प्रसन्नता उषा एक सुंदर रमणीसी आरही है ।

वामा

स्त्री वामा है । क्योंकी वह सौंदर्य बिखेरती है । वैयाति सौंदर्यम इति वामा" वामा दुर्गाकाभी नाम है । नारीमें सौंदर्य सौरभ्यम प्रेम-प्रेमम अनन्यता और अन्यतामे आती है ।

नारी जातीका क्रमिक विकास :

साहित्यमें नारीकी स्थिती

साहित्य सौंदर्यके माध्यमसे मानव जातिके जीवनमें आनंद फैलाता है । नारीका अपने व्यवहारकी रमणीयतासे जातिके जीवनमें मंगल बिखेरती है । कविताकी सजीव मूर्ति नारी मानवकी व्यवस्था तथा साहित्य की प्रेरणाभुमि है । विश्वकलाकारकी श्रेष्ठ अनम्य कृती है ।

भारतीय साहित्यमें नारी तथा उसकी स्थिती

[वैदिक साहित्यसे आधुनिक युगतक]

ऋषिकालके अंतरालमें ही भारतीय साहित्यका प्रारंभ हुआ है । इस साहित्यमें तत्कालीन नारी जीवनकी झलक स्पष्ट होती है । इसमें सबसे प्राचीन ऋग्वेद है ।

1] **वैदिक कालीन नारीकी स्थिती**

जिस समयमें अन्य देशामे जंगली अवस्थामें होनेवाली स्त्रियों को भारवाहक पशुका जीवन बिताना पडता था, उस भारतीय समाज मे सुलभा गार्गी व• समाज नारियाँ पुरुषोंकी बराबरी से ज्ञान मार्गी तथा कर्ममार्गकी अवलंब कर रही थी । आर्योंकी देवता विषयक कल्पना ओंसे पता चलता है की वे वेदकालीन स्त्रीका स्थान कितना ऊँचा था । वैदिक स्त्रीका ढाया स्त्रीके रूपमें उठाया गया था । वास्तवमें प्राचीन ऋषीयोंकी नारीका विचार किसी न किसी प्रकारकी प्रेरणा अवश्य देता है । नारीका सौंदर्य ऋषीयोंकी भावुकता को पुलकित अधिकृत करता हुआ अनेक नेत्रोंके सामने चमकते हुये पूर्ण नारीका स्वरूप उपस्थित करते है । वैदिक कालमें आर्य भारतमें थे इसीकारण स्त्रीका दर्जा ऊँचा था । पुरुष युद्धोंमें कार्यरत होनेसे जीवनका संपूर्ण भार स्त्री पर ही था । ऐसेही दशामें नारीने सिध्द कर दिया की वह परावलंबी नहीं है । युद्धमें विजयके लिये नारी आवश्यक थी है । साथही आर्योंको अपनी संख्या बढानेकीभी चिंता थी ।

संपूर्ण सृष्टीके आकलनकाकी समानता का स्थान दिया गया ।

अर्धनारी नटेश्वर शिवका निर्माता है। किसीकी देवताकी स्त्री सदैव तथा शक्तीके बिना पूर्णता नही आती। वेदकालीन हिंदुभी कहा करता था की सुसंस्कृत कन्या को पुत्रोंसेभी कई गुना अच्छी होती है। कन्येयं कुल जीवितम" शब्दोंमें सम्मान होता है। क्योंकी नारियोंको स्वतंत्र बुध्दी तथा आत्मीक जीवन यार जीवनके लिये आवश्यक इसीकी शिक्षा उन्हे लडकोंकी क्योंकी शिक्षाकि मिलती थी। पर्व इतना था की संगीत नृत्य इ० कलाये भी सिखाई जाती थी।

स्त्री आत्मा अैक स्वकार है।

प्रथम प्रकारकी नारीयाँ 16 सालतक शिक्षा प्राप्त करके अनुरूप पतीसे विवाह बध्द हो जाती थी। नित्य कृत्योंके लिये आवश्यक सूत्र वे मुखोदागय करती थी। विवाहोत्तर गृहिस्था श्रममें पत्नीका स्थान महत्वपूर्ण था। धार्मिक कृत्यमें कुछ अधिकार समजने दिये थे। पत्नीके सिवा गृहस्थाजीवन अधुरा रहता था। सामवेदीय भाग गाया यज्ञीय दावन करना इ० धार्मिक कृत्य स्त्री ही करती। सूर्य कालतक स्त्री पू० 500 पूर्व तक पत्नीकी अनुपस्थितीके परवी यज्ञ कर सकती थी। सीतायाग रुद्रवती, रुद्रयात्र इ० यज्ञ करनेका अधिकार तो केवल स्त्री को ही था। पत्पत्नी विवाह प्रचलित था।

ब्रम्हवेदिनी स्त्रिया आजतक ब्रम्हचर्य का पालन करके वेद विद्या तथा ब्रम्ह विद्याका अध्ययन करती थी। कई लेखिकायें सुलभा, मैत्रेयी, गार्गी वाचक्नवीकिया इ० नारीयाँ प्रसिध्द है। गार्गीने याज्ञवल्क्य जैसे पूर्वपंडित को भी कुंठित किया था। स्वतंत्र ग्रंथ रचना, आध्यात्मिक चर्चा इनके अतिरिक्त स्त्रियाँ पुरुषोंके समान अध्यापनका कार्यभी करती थी।

यज्ञयाग, राजदरबार इ० सार्वजनिक स्थानोंकी तरह घरमें भी स्त्रीका स्थान स्पृहणीय था। स्वतंत्र तथा सुबुध्द स्त्री बालककी सर्वश्रेष्ठ गुरु समझी जाती थी। वैदिक कालमें स्त्रीका शारिरीक मानसिक तथा

आध्यात्मिक नाश करनेवाले विवाह पध्दती नहीं थी । अपनी पसंतीसे वे विवाह कर सकती थी । विवाहके बादभी वह 17 साल तक स्वयंवर करती थी । विवाहके बादमें वह पुरुषके हककभी गुलाम नही थी । अर्थात - सहधर्मिणी थी । पहिला विवाह टूट गया तो दुसरे विवाहकी अनुमती थी । सति की प्रथा उससमय नहीं थी । पुनर्विवाह की तरह उसका जीवन कष्ट मय नहीं था ।

2) उपनिषद साहित्यमें नारी स्थिती

नारीको उपनिषदमें कहीं कहीं अभिलाषा भी कहा है । श्रुतिमें कई शीर्षकोंसे उसका उल्लेखभी किया गया है । फिरभी नारीका वास्तविक स्वरुप पर ब्रम्हपरमेश्वर की भिन्नभिन्न शक्तीके समानही है । नरनारीकी जोडी सदा सर्वदास अटल है । जैसे इन दोनोंका यह तेज एकरुप माना जाता है । इसी प्रकार इन दोना अंशरुप लौकिक नारियोंको भी एकतत्व है नामसे ही कहना चाहिये । यदि नर रुप जीवत्मसे विचारणा करता है तो नारी बुध्दी बनकर सहयोग देती है ।यदि नर सूर्यरुप बनकर जगतको प्रकाशित करता है नारी उसे अवलंबन देती है । नर बदलकर जलवृष्टी करता है तो नारी पृथ्वी बनकर उसी जलसे प्राणीयोंका पालन पोषण करती है । नर संचायक है । नारीकी श्वेताश्वतोप निषदमें सुंदर रुपकी कल्पना करते हुये उसे तु स्त्री है, तु पुरुष है, तुही कुमार या कुमारी है । यही संबोधित किया है । इतनाही नहीं मीमांसा दर्शनमें सिध्द करनेका प्रयत्न किया है की मूल प्रवृत्तीसे स्त्री धाराका संबंध है । सप्तशतीं रुप देवी भवानी के अनुसार समस्त विद्या और सब स्त्रियों देवीकी ही रुप है । सभी ग्राम्य देवियाँ और समस्त विश्वस्थिती स्त्रियाँ प्रकृति माता की तरह ही अंश स्वरूपिणी है ।

3) स्मृती ग्रंथोंमे नारीकी स्थिती

स्मृतिकारने बडेबडे विचार उथल रुपसे स्पष्ट किये है । उनके अनुसार नारियाँ साक्षात देवी और लक्ष्मी रुपा है । स्त्रियोंका आदर

केवल लौकिक दृष्टीसे नहीं धार्मिक दृष्टीसेभी करते है । हिंदु समाजकी नारी भगवती दुर्गा की प्रतिमूर्ती है । वेदोंसे लेकर स्मृति यौंतक यह बात कही गई है कि, स्त्रियाँ घरकी स्वामिनी है । हिंदु पुरुष केवल धनार्जन करता है । उसका संग्रह एवं उपयोग घरकी स्वामिनी के आधीन होता है । पति स्त्रीका सर्वस्व है । पर पिताके मृत्युतक यदि पुत्रीका विवाह संपन्न हो नहीं पाता तो उसके विवाहके समय प्रत्येक भाईके हिस्सेका 4 था भाग बहनके विवाहके लिये दिया जाता है ।

4] सूत्र कालमें नारीकी स्थिती ।

इस कालमें प्रारंभमे स्त्रियोंको पढनेकी सुविधा थी । पत्नी वैदिक मंत्रोके रहस्यका ज्ञान प्राप्त करनेके लिये शिक्षीत होना चाहिये । तो दूसरा मत है कि सुशिक्षित विदूषीयोंके उनके अनुरुपही विद्वान महिलाओंके साथ विवाह होते है । स्त्रियाँ पुरुषों के बराबर वेदाध्ययनभी करनेके लिये जाती थी । इसी छात्रकी कंठी कठशाखाकी [illegible] बह्वृचीकी आदि नामोंसे वे परिचित थी । साहित्य क्षेत्रके अलावा शिक्षाशास्त्रमें भी स्त्रियाये अग्रगण्य थी। उन्हें वैसा अधिकारभी प्राप्त था ।

पर सूत्रकालमें नारी उच्चस्थानसे नीचे गिर गई । संख्याधिक्यके कारण आर्य उत्तरसे दक्षिणकी ओर जाने लगे । इस नये वातावरणमें उनकी संस्कृतीभी धीरे धीरे बदली । अनार्योंके साथ शरीर संबंध होनेसे शुध्दता भी कम हुयी । पुरुष योध्दारूपमें रहने लगातो स्त्रीका महत्त्व भी कम हुवा । पुरुष वर्गका महत्त्व बढा स्त्रीयोंका व्यक्तित्व लुप्त होकर वे रक्षणिया वस्तु बन बैठी । स्त्रीयोंका [illegible] असंस्कृतत्व तथा हीनत्व सिध्द हो वैसी पध्दतीयाँ रुढ हुई ।

इसी कालमें स्त्रीके वेदपठन तथा यज्ञकर्म के लिये अनाधिकारी माना जानेसे स्त्रीका महत्व कम हुआ । यज्ञकर्म के सोमप्राशनका महत्त्व माना गया । दक्षिणमें स्त्रीयाँ प्रकृतिके कारण सोमप्राशन नहीं कर सकती थी। धीरे धीरे सोमप्राशन का नियम निकाला दिया गया । और अन्य यज्ञकर्मोंसे भी

उन्हें निकाला गया । वेदपठनकी आवश्यकता उन्हें नहीं थी । इसीकारण वेदोंमें भी स्त्रियाँ अनाधिकारी साबित हुईं । ई अर्थात सूत्रकालमें वैदिक धर्मका एकसूत्री समावेशक स्वरूप प्राप्त हुआ । आर्य अनार्योंके शरीर संबंधके कारण विविध वर्णोंकी प्रजा निर्मिती हुयी । ब्राह्मणोंका स्थान बढा । शूद्रोंको अनाधिकारी माना गया । यज्ञ कार्यमें पत्नीके साथमें बैठना केवल हाथसे हाथ का स्पर्शमात्र रहा । सहयाग्निदेनेका अधिकारभी थोडेसे प्रमाणमें बचा रहा ।

मनुके कालमें अनुपनयनकी रीतिशुरू हुई । आगे चलकर पुनर्नयनभी अयोग्य ठहरा । स्त्रीका मानसिक एवं बौद्धिक विकास रुक गया । वह केवल पुरुषकी भोगेच्छा कामेच्छाका साधन माने जाने लगी । शरीर सुखका आकर्षण वह बनी । साथही कई दोषभी उसके साथ चिपकने लगे । स्त्रीको दुर्गुणोंकी खानी समझा जाने लगा । और स्त्रीपर कडी नजर रखी जाने चाहिये यही मानदंड माना गया ।

पिता रक्षति कौमारे
भर्ता रक्षति यौवने
रक्षन्ति स्थाविरे पुत्रा
न स्त्री स्वातंत्र्य मर्हति

इस प्रकार स्त्री पारतंत्र्यकी शृंखलामें जकडी गई । आठवाँ साल विवाहके लिये उत्तम माना गया । वह अल्पवयीन होनेके कारण शिक्षा नहीं मिलती थी । विवाहोत्तर दशामें पतिके घरका स्वातंत्र्य नष्ट हुआ। पतिके घर विधानपूर्वक काम करे यह दासत्व पतीके अतिरिक्त पार लौकिक हितका उसे रास्ताही नहीं मिलता था । स्त्रीको स्वच्छंदचारी पतिकोभी भगवान मानना पडता था । स्त्रीका केवलमेव आधार पती था । उसके पासही उसकी सब निष्ठाऐं केंद्रित हो गई । पतिव्रता के बंधनमें वह परावलंबी बन गई ।

5] महाकाव्यमें नारीकी स्थिती :

स्त्रीका परावलंबीत रामायण महाभारतमें स्पष्ट हुआ है। कन्या

पितृत्व ऐक दुःखकारी बातका मानी जाने लगी । पर कन्याको घृणास्पद नहीं माना गया । अविवाहित कन्याओंको मांगलिक एवं शुभ कारक माना गया ।

कन्याका विवाह महाकाव्यके कालमें प्रौढावस्थामें हुआ करता था । पर कन्याको स्वातंत्र नहीं था । वह पितृवशा थी । कन्याकी याचना सिर्फ पितासेही करनी पडती थी । देवपूजा प्राचीन भारतमें थी । कन्यादानके समय प्रचुरमात्रामें दान किया जाता था । परदा पध्दती अधिक प्रचलित नहीं थी ।

प्रेमका आदर्श भी इसी कालमें स्पष्ट दिखता है। सीताकी रावणको स्पर्शभी न करना आदर्शका प्रतिक है । स्त्री के लिये पति बिना गती नहीं थी । स्त्रीको पिता ,पुत्र, और ज्ञातिके अतिरिक्त चौथी गति नहीं थी । महस्मृतीके उपरांत वाल्मिकी व्यास कालिदास, भवभूति आदिने स्त्रीपर काव्य लिखे। आदर्श ग्रंथ, नारियोंभी यहाँ थी । उत्तरा, सावित्री, दमयंती ने अपना स्वयंवर किया था । दमयंतीने पुनर्विवाह किया। कैकयी पतीके साथ युध्दपर गई थी । द्रौपदी धर्म चर्चामें भाग लेती थी । इस प्रकार वैदिक स्त्रीको वैदिक युगमें स्थान था पर आगे आगे वह स्थान छन चुका । रामने एकपत्नी व्रत सिध्द किया । पर लोगोंको वह मान्य नहीं हुआ । और स्त्रीको भोगनेका स्वरुप मिला । वह ऐक जड़वस्तु बन गई । कई ऐक स्त्रीयामें दुगातीसे पीसी जाती थी । अंतमें सिध्द हुआ कि भारतीय नारी निजी व्यक्तित्व निजी आदर्श और नीजी मत सदोसनिये पुरुषके चरणोंपर कुंठित हो गये ।

6] बौध्दकालिन नारीकी स्थिती :

इ.स.पू. 500 वर्षमें हिंदू धर्मकी बुनियादपर ऐक जबरदस्त परिवर्तन हुआ । बौध्द जैन धर्मभी इसीमें पैदा हुआ । ब्राम्हण धर्मके साथ बढी झुककर जैन धर्मने भी । बौध्दधर्मने स्त्रीयोंको मुक्तीमार्ग खोल रखा। हिंदूधर्मने स्त्रीयों

को डाली श्रृंखला संपूर्ण रूपसे दूर गई । भिक्षु संघमें प्रवेश मिलनेके कारण संस्कृतीवर्धन समाजसेवाकी संधी मिलती गई । कुमेसों धर्मशास्त्रमें अधिक ज्ञान मिलगया । बौद्ध कालमें क्षेमा महाप्रजापति किस गौतमी इ० विदुषी नारियाँ है । जिन्हें नारी शिक्षाके क्षेत्रमें ज्योतिस्तंभ का स्थान रखते है ।

कुछ उल्लेखनीय स्त्रियाँ :-

सोमा :- अनुपमा - राजरानी क्षेमा - छापा

सुजाता - किसागौतमी - सुंदरी

भीक्षुणीमें इन्हें समानाधिकार मिला एवं गणिकाओंमें भी प्रवेश मिलता था । हिंदू धर्ममें नारीको जो पीड़ा था वह इस धर्ममें कम हुई । कन्याजन्मको आपत्ती नही माना गया । व 16-20 वर्ष तया मर्यादितक कन्या अविवाहित रहती थी । पिता कन्याओंको सुशिक्षित रखा करते थे । वेश्यावृत्ती समाजके प्रचलित होनेके कारण घृणाकी दृष्टीसे देखा जाता था ।

7] गुप्त कालमें नारीकी स्थिती :

स्त्रीयोंको वैदिक शिक्षा लेनेकी अनुमति नहीं थी । उच्च एवं समृद्धशाली स्त्रियोंको शिक्षा मिलती थी । आश्रम वासिनी कन्याये इतिहास तथा पुराणका वाचन करती थी । संस्कृती कार्योंमेंभी उच्च जातीकी स्त्रीयोंमे स्त्रीयाँ हाथ बटाती थी । कभी कभी वे दंडभी देती थी । गाँवकी मुखिया काभी काम स्त्रियाँ करती थी । संगीत नृत्य कलामेंभी वे निपुण थी । स्त्रियाँ परदेशी यात्रायें भी करती थी । पर्दा पद्धती उस समय रूढ नहीं थी । स्त्रीका खरीदार कोई नहीं था ।

8] मध्ययुगीन साहित्यमें नारीकी स्थिती :

18 वी शताब्दीके उत्तरार्ध मुगलोंके आक्रमण कालमें स्त्रीयोंकी स्थिती खराब थी । उनके आक्रमणके कारण की स्त्रीयोंका जब शिष्ट स्वावलंबी नष्ट हो गया । बाल विवाह पर्दा पद्धती के कारण शरिरिक मानसिक रूकावट

जाने लगी । बहुपत्नीयत्व का संसार हिंदुसमाजपर हुआ । विकास मय उपभोग्य वस्तु माननेकी प्रथा हिंदु और मुसलीमसे भी । काव्यक्षेत्र साहित्य क्षेत्र संस्कृत लेखा वैद्याकीय क्षेत्र कलाओंके प्रोत्साहनके क्षेत्र बने । राजघरानेकी कन्याओंका प्रोत्साहन मिलता रहा । इनमें संस्कृत पंडिता उत्कृष्ट कवियां कलमें राजनीतिज्ञ रानियाँ भी बन गयी।

9) भक्तिकालीन साहित्यमें नारीकी स्थिती :

भक्तिकोलिये कामसे अर्थात स्त्रीसे दूर रहना चाहिये । स्त्रीयों वाघिनी विषवेलिका कामपूर्तीकी प्रबल दायिनी मति हीनता वादी वासनाका प्रतीक मार्गकी बाधा , ढोल गंवार पशु तक नारीको माना फिरभी नारीका भाव्य हृदय आत्मापर्ण त्याग वे भूल नहीं सके । महाराष्ट्रमें भक्तिवादके जरिये स्त्रीमें क्रांति हुयी । अनेक संत महिलायें बनी । ब्राम्हण अपने धर्म के प्रति अधिक बढे । बालविवाह प्रथा शुरु हुई । स्त्री शिक्षा गौण बनी । संकटोसे बचनेके लिये स्त्रीको पर्देमे रखा गया । और स्त्रीकी रक्षा इस प्रकार की गई ।

10) आधुनिक कालमें स्त्रीकी स्थिती :

18 वी शताब्दीके कालमें अंग्रेजीकी हुकूमत शुरु हुई लार्ड बेंटींगने सती प्रथा बंद की । उन्होंने 1856 मे विधवा विवाह बिल पास किया । आधुनिक कालमें भारतेंदु युगसे एक युग बन गया । साहित्यीक सामाजिक रिवाजोंके मुताबिक बाल विधवा विवाह बंद हो चुके । अबला दास्यत्व विमोचना कंकण हाथमे बांध लिया । अंतमें सुविद्य सुशिल, तेजस्वी, नारीकी निर्मिती बनी । फिर वे प्रश्न निर्माण किये और साहित्यमें भी यथार्थ दर्शन होता गया ।

इस तरह साहित्यका नारी भावनाका विचार समाजजगत की अवस्था पर निर्भर रहता है । नारीकी सामाजिक दशा देशकी राजनितिक आर्थिक तथा धार्मिक परिस्थितीयोंके आधार पर बनती है । क्योंकी

साहित्यको समाजका दर्पण है जो चाहे देखना सत्य, असत्य, शिव, अशिव, सुंदर, असुंदर सभी दृष्टीयोंसे ।

३) हिंदी नाटक तथा नारी चरित्र एवं प्रकार

कला मनका अविष्कार । अभिव्यक्ती कलाका माध्यम । चित्र, संगीत नाट्य शिल्प मूर्तिकला भी शब्दोंव्दारा व्यक्त होती है । विशिष्ट व्यक्तीकी विशिष्ट प्रयोगमें विशिष्ट वर्तन करता है । व्यक्तीके मनपर आसपासकी परिस्थितीयोंका प्रभाव पडता है । व्यक्तीके मनपर होनेवाले धात प्रतिधात उसे अच्छे बुरे मार्गोपर वर्तन करनेके लिये प्रवृत्त करते है । यह मानवी स्वभाव है जिसका संपूर्णतीक अभ्यास करना जरुरी है । ऐसे अनेक प्रसंगोको गुथना पडता है । विभिन्न विचार संघर्ष परिस्थितीसे बनतेही मानवी मन बन जाता है । मनमें अधिक गहेरा जानेसे मनके भाग स्पष्ट जाते है ।

सामान्यतौरपर स्वार्थ औदार्य, राग, व्देष, कुत्सितप्रवृत्ती, दिलदारी शौर्य, कायरता इ. विकारोंके मिश्रणसे मानवी स्वभाव बनता है । इन स्वभावोंपर मानवप्राप्त परिस्थितीयोंका परिणाम होता है। कलाकारी इनसे प्रभावित होकर अपने हृदगत भावोंको स्पष्ट कर सकता है । मानवी मनोवृत्तीयोंका यथातत एवं सूक्ष्म चित्रणही नाटकका प्रधान लक्ष्य है । चरित्र चित्रणनाटक का प्राण जरुर है पर मानव हृदयकी विभिन्न अनुभूतियोंका प्रदर्शन उसमें होता है । कथावस्तुको चरित्रचित्रणके माध्यमसे उच्चता प्राप्त होती है । यह चित्रणस्वाभाविकतासे होना जरुरी है ।

नाटककी सफलता घटनाओं एवं उनके नियोजनपर आधारित होती है । कथावस्तूके अनुसार पात्रोंके चरित्र चित्रणकी योजना होती है । तथा योजना करनी चाहिये । कथा वस्तुके संवादोंपर कम्प्र ... पात्र कामअधिक हो । पात्रोंकी महत्व उनके चरित्र चित्रणमें है । साहित्य जीवनसे जीवनकी और व्याख्या करता है । अत: अन्य अंगोमें भी मानव चरित्रका निदर्शन हम पाते हैं । साथही साथ इन पात्रोंका मानसिक विचार भी होता है । नाटककार स्पष्ट रूपसे कुछ ना कुछ कहकर अव्यक्त रूपसे सबकुछ बोल देता है ।

कथनके अनेक प्रकारोंसे नाटककार विचार स्पष्ट करता है ।

नाटकोंके पात्रोंमें कुछ स्वाभाविकता होना आवश्यक है । कुछ पात्र मानव गुणोंमें तो कुछ पात्र लौकिकगुणोंमें दिखाई पडते है । कुछ साधारण कुछ ऊपर उठे हुये कुछ मानवहीन कुछ अतिमानवीय अत: पात्रोंको कुल्याण गुणयुक्त प्रदर्शित करते है । यह करते हुये भी मानवीयस्तरके वे विभक्त नहीं दिख पडते । उन्हे जिंदा बनाना आवश्यक है । वे सिर्फ अच्छे या बुरे नही होते बल्कि मानवीय हृदय बुद्धी प्रेरणा स्मृति कल्पना आसक्ती अनुभूति इ० घटना ओंका समन्वय होता है । भय, दु:ख, सुख-दुख आशा, निराशा, अहंकार, करुणा , संतोष, घृणा, भक्ती साहस, प्रतीक्षा जैसे भाव अपने सहज भावों और विभावोंसे प्रभावित होकर अंत:करण को अंदर अकल्पनीय दृष्य उत्पन्न करते हैं ।

कल्पनारम्य नाटकोंमें गढे गहाये सुखी संपन्न पात्र
==============================

ये नायिकाये सुंदर, विदुषी, मृदुभाषिणी, चतुर वैभव संपन्न होती है । नायिकामें सीधी सादी होना जरूरी है । ऐसे पात्रोंका निर्माण होना जरूरी है । जो सभी मनको मग्न कर दे । इसमें प्रथम दर्शनी प्रेम विरहमें जलन, सहित स्थानमें भेंट, संकटोंसे लडना अंतमें मीलन सामान्य रूपसे मिलता है ।

आदर्श पात्र
=======

काव्यमें मुलत: भाव होना आवश्यक है । भाव वस्तुओंद्वारा हमारे मनपर पडे प्रभाव अच्छे बुरे विचारोंको लेकर चलते है । भाव प्रीय अप्रीय दोनो बातोंका आदि होता है । जो वस्तुए हमे अच्छी लगती है । उनका प्रभाव कायम स्वरूपसे हमारे मनपर होता है । हमारा मन उन्हीको ग्रहण करता है । अयोग्य एवं अयथार्थ गुणों से भी हमारा मन द्वेश करता है । आदरणीय पात्रोंका हमारा मन मानता है । उन्हें आदर्श रूप देता है । यह केवल अधूरी सोचका सत्य नही । पूर्ण सत्य है । मानव सत्यका यथार्थ

वास्तविक रूप लेकर सत्यकी पूजा करता है । यह Idealism या originalism या आदर्शवाद यथार्थ वाद हम कहते है । आदर्शवाद पूर्णतः आदर्श विचारोंका होता है । जिनसे हम प्रभावित होते है । आदर्श शब्द मानवी सभ्यतासे संबंध रखता है । वह मानव सभ्यताका [illegible] प्रतिक है ।

कुछ पात्र वाणी एवं विचारोंसे फलता जाते है । अपनी सहज उदारता एवं सहानुभूतीसे अपने युगपर अपने व्यक्तीत्वकी अमिट छाप डालते है । कई पात्रोंका प्रेम ऐसा है जो स्वार्थी नही [illegible] है । जिस जो केवल परमात्मा स्वरूप प्रेम है । जिसमें उत्सर्ग है बलिदान और त्यागमें वह रहता है । अपनेको देकर बदलेमें कुछ लेकर वह नही चाहता । आत्मसमर्पण यदि प्रेम है तो वहाँ स्वार्थ कहाँ ? इसीकारण प्रेम सदैव एकके लिये होता है । दो से होनेवाला प्रेम यह वासना ही होता है । मोह, कुलीनता इ० विकार नैसर्गिक जरूर है । पर उनपर विजय पाना ही मानवके चरित्रकी महानता है । त्यागकी चरित्रोंमें मूर्तिमान है । वह प्रेमीके लिये सबकुछ मिटा देना चाहता है । प्रेम हृदयकी मनोवृत्ती है । जिसकेलिये जीवन मिटा मिट गया । प्रेमी अपने प्रेमके लिये उसके प्रियोंके लिये तिलांजली दे देता है । इसीमें वह महान सुख मानता है । जहाँ वह अपना सबकुछ परमेश्वरको दे देता है । वहा अपना निजका कुछ नही वही पर वैराग्यकी भावना पैदा होती है । जैसे पुरुषोंमें चारित्रोंमें विवेक विनम्रता त्याग, कुलीनता, इ० गुण होते है। प्रेमकी जिवीत प्रतीक नारियाँ इन नारियोंकी नैराश्य भावना नेही इन्हें अधिक दर्शनिक बना रखा है ।

स्वच्छंद उन्मुक्त चरित्र :-

कुछ चरित्र, स्वच्छंद, उन्मुक्त होते है । किसी औरका ही बंधन वे मानते नही । अपितु किसी औरका बंधन उन्हें पसंद नहीं आता वे अपनी मर्जीसे जीना चाहतेहै । मरना चाहतेहै । ऐसे चरित्र

स्वाभाववाले होते है । भारतीय नारियोंमें यह भावना

काफी कम प्रमाणमें होती है । ये ऐसे पात्र आदर्श के लिये नही माने जाते ।

<u>आदर्श, सतीत्व, अनन्य स्वाभिमानपूर्ण पात्र</u>

नाटकमें नारी एक देवीके समान पति व्रतका धर्म पालन करती हुई दृष्टीगोचर हुई दिखाती है । कष्टमें रहकर भी धर्म से विचलित न होनेवाली नारी नारी जातीके लिये आवश्यक है । पतिके सुख दुखमें सहारा देकर पतिकर्तव्यमें वह साधन बन जाती है । कर्तव्य पालन प्रतिव्रत आत्मसमर्पण निष्पापसेवा, पतिकेप्रति आदर्श निष्ठा सहिष्णुता, धर्म पालन शील सतीत्व मात्रृभें इन गुणोंको नारीमें पाया जाता है । जिसके जीवनमें प्रतिनिष्ठा और आत्मसमर्पण हो प्रेम का मार्ग है ।

नारीके विचारकी सीमा विस्तृत है । पुरुषकी संकीर्ण नारी कोमलताका प्रतिक तो पुरुष क्रूरताकी क्रूरता जिसदिन नारी स्वीकार करेगी उसी दिन नारीजाती नष्ट होती । ये आदर्श नारियाँ विश्वमैत्री करुणा, प्रेमका सिध्दांत भौतिक रुपसे न देकर अपने आचरणों द्वारा उदाहरण देती है । जिसप्रकार नारीके हृदयमें विश्वमैत्री है उसीप्रकार वे संकट कालमें अपना कर्तव्य भी भूलती ह नहीं । कर्तव्य प्राप्तीके समय अपनी आशा आकांक्षा औंका भी बलिदानकरती है ।

कुछ पात्र ऐसे भी है जो विचारशील प्रवृत्तीके है । उनके हृदयमें दया क्षमा, शांती व उदात्त गुण है । हिंसा क्रूरताके वे पेर है । सहिष्णुता निष्ठा धीरतापूर्ण अभिमान आदि गुणोंसे वे भरे है । कठीनसे कठीन परिस्थितीमें अपना धीरज नही छोडते, कुछ नारियाँ सिसका सिसक कर रोना जानती ही नहीं है । वे क्रांतीकी महाज्वालाभी प्रज्वलीत करती है । कर्तव्य एवं सामान्य गुणोंकिक के बरावटसे ऊपर ऊपर उठ जाती है । फिरभी वे हमसे माननीय ही लगते है । कुछ नारियाँ हमे देवियाँ सी लगती है ।

SHIVAJI UNIVERSITY

यथार्थ पात्र :-

कल्पनाको स्पर्श न करते हुए यथार्थ रूपको चित्रित करना । जैसे के वैसा चित्रण यह यथार्थवादी चित्रण कहाया जा सकेगा । जीवनके विषयमें मूलतत्व ढूंढ निकालना यथार्थ प्रावका मूल हवेश है । सत्य अभिव्यक्ती स्पष्ट विवेचनीय वस्तु अर्थात यथार्थ है । सत्या शिव सुंदरम मंगल अमंगल, योगायोग, अच्छाबूरा, आदीका विचार यथार्थवाद है । नारी सबसे नारी है । और बादमें सबकुछ यह महत्वका यथार्थ वाद है । वही सिर्फ है वह पुरुषोंके हाथकी कठपुतली नहीं है । अपनी परतंत्रता एवं वेदनामें दीनभी नहीं है । न्याय एवं सत्यके प्रति ठकरानेवाली क्षमता रखती है । कल्पित आदर्शका यथार्थ रूप याने ही आदर्श पात्र यही विचार कर सकते है ।

प्रतिक पात्र

इसके अंतर्मनमे यथार्थ वाद ही छिपा है । भावनाओंके पीछे प्रतिकात्मकताकी छिपी रहती है । देशकी संस्कृती रिती हि रुढी , रिवाजके अनुसार ही प्रतिककी सृष्टी होती है । यह प्रतिक पात्र विभिन्न मनोवृत्तीयोंको ही प्रतिक होते है । चाहे तो वह लेखकके मनका एक विचार वह हो सकता है । जो हृदय या मस्तिष्कका होता है वही वाणीमें साकार होता है । वही प्रतिकपात्र होते है । उन्हें सामने रखकर कुछ चरित्र निर्माण कीये जाते है ।

खलपात्र :-

वासना, विलास कुटिलता, क्रूरता, विश्वासघात इ० तमोमय गुण इसके भरे पैठे होते है । ऐसे पात्र अपनी महत्वाकांक्षाके लिये औरोंका नाश भी कर सकते है । ऐसी प्रक्रिया करतेवक्त वे विचारविवादहीनही । बल्के पात्रोंके बारेमें वे नारीयाँ वैभव और वासनाकी अतृप्ती से आकुल होकर जीवनकी ओर दौडने लगती है ।

अकेला होकर भी वे अपने पथपर चलती है । वे जानती है कि महत्वा कांक्षा के लिये असीम साहसकी जरूरत होती है । फिरभी नारीकी कोमलता दयावृत्ती हम भूल नहीं सकते । उनकी शीतलता भूल नहीं सकते । और भी अन्य प्रकारके नारीपात्र है जिनके ईर्षा, द्वेष, घृणा क्रोध रौद्ररूपभी दिखता है । जो अपनी अपूर्ण भावनाओंको अलग अलग प्रकारसे व्यक्त करती है ।

3] नारी जीवनके विभिन्न पक्षों एवं स्तरोंको दृष्टीमें रखते हुए उन्हे निम्नलिखित प्रकारसे वर्गीकृत किया जा सकता है ।

प्रेमिकाएँ
रूपगर्विताएँ
संभ्रात कुलिनाएँ
लोकसेविकाएँ व । महामानवियाँ
कौटुंबिक स्नेहमयी गृहिणीयाँ
वीरांगनाएँ
जीवनके सात्विक क्रांती की ज्वाला जगानेवाली
नाश कारिणीयाँ- विद्रोहनीयाँ
बुध्दी- जीवियो व गितिकाएँ
काला -प्रेमिकाएँ - दार्शनिकाएँ
रूप जीवी या पेशवर विलासिनियाँ

इसके अतिरिक्त अनेक विकलाये तपस्विनिया प्रेम जीविकाएँ, विधवाएँ , साम्राज्ञीयाँ राजकुमारियाए दलिताएँ, पतिताएँ कुलवधु दासियाँ आदि

नारी चरित्र
========

1. राजनितीकी आगसे खेलनेवाली राज महाषिरसे
2. जिवन युध्दमें प्रेमीका लेकर मेकर जूटनेवाली स्वाभिमानिनी राजपुत्रीयाँ ।
3. जीवनके भ्रमरमें पडी हुई मध्यम वर्गीय दुखी नारियाँ ।
4. अपने निस्पृह बलिदानसे नाटक के जीवनमें एक करुण गंध छोड जानेवाली फूलसी सुकुमारियाँ " । ।

नायिकाओंकोभी विभिन्न आधारोंपर वर्गीकृत किया है 21

1• दिव्य एवं आदित्य जातियोंके शील के अनुरुप ——— देव असुर यक्ष गंधर्व, नाग, पिशाच्य, व्याघ्र ,नर वानर मृग आदि

2• सामाजिक व्यवहारके अनुसार — कुलिन, वेश्या, तथा शुध्दभावसे प्रिय के साथ रहनेवाली ।

3• अवस्थानुसार :- स्वाधीन पतिका वासक, सज्जा उत्कंठता, अभिसारिका

4• प्रेमके अनुसार :- मदनातुरा, अनुरक्ता, तथा विरक्ता

5• प्रकृतिके अनुसार :- उत्तम, मध्यम , और अधम

6• यौवनके अनुसार :- प्रथमा, द्वितीय, तृतीय, और चतुर्थ यवना

7• अंत:पुरवासी : महादेवी, देवी , स्वामिनी, स्थापिता, भोगिनी, शिल्पकारिणी, नाटकीया, नर्तकी, अनुचारिका परिचारिका, संचारिका प्रेक्षणचारिका, महत्तरी, प्रतिहारी, कुमारी और आयुक्तिका ।

उक्त संश्लिष्ट आधारोंको न्यूनाधिक रुपमें स्वीकृत कर आधुनिक विद्वानोंनेभी पात्रोंको निम्नलिखित प्रकारसे विभक्त किया है ।

पात्रोंके वर्ग	आधार
स्त्री व पुरुष	प्रकृतीरचना
यथार्थ वादी व आदर्शवादी	जगत व जीवनको देखनेकी मूल दृष्टी
उच्चवर्गीय व निम्नवर्गीय	समाज व्यवस्थाव आर्थिक दृष्टी
नागरिक व आदिवासी	समूह जीवन, शासन
ग्रामीण	व्यवस्था
व्यक्तीवादी व सामाजिक	अहंवृत्तीका न्यूनाधिक्य
बौध्दीक व भावुक कल्पनाशील	अंत:करण की मूलवृत्ती
अनुगामी व कुचक्री या सज्जन व दुष्ट	जीवन व्यवहार

गृही व विरक्त सन्यासी	आश्रम व्यवस्था
भारतीय व विदेशी	संस्कृती
विद्रोही या नियतिवादी	सृष्टीविधानकी स्वीकृती अस्वीकृती
बाल,युवा,प्रौढ,व वृध्द जंजीर	कार्यक्षमता, शारिरिक, मन व साधन शक्ती
पौराणिक, ऐतिहासिक आधुनिक वर्तमान	काल
पहाडी, मैदानी, समुद्र तटवासी	जलवायु व भूगोल
शोषक व शोषित या सेव्य व सेवक	अधिकार वृत्ती या शासन वृत्ती
ब्राम्हण, क्षत्रिय आदि	वर्ण व्यवस्था
असाधारण शक्ती सिध्दी आदि	अति प्राकृतिक, अशरीरी वैज्ञानिक या मायावी वृत्तीके पात्र

4] नारी मनके पृष्ठभूमिपर

नारी एक उलझन है , समस्या है , एक कोहरा है , एक स्वप्न है, एक गहरा सागर भी, एक छीछला बहता पानी भी । उसे कोई पूर्ण रूपसे जान नही पाया । कई एक पर्तोंमें छिपा वह छिपकली है । छुई मुई है तो वह रजनीगंधाकी सुगंधीत करने वाली निष्पाप कली भी है । भरत मुनीने उसके स्वभावका वर्णन किया है की पुरुषकी अपेक्षा वह गंभीर, सलोम, पुरुषकी अपेक्षा अधिक संवेदन शील भी । इसलिये

कहना ठीक है कि

श्रेष्ठ गंधवाला पुष्पही लज्जा और विलासकी

होता है । नारीकी विशेषता अर्थात उसका सजीलापन सर्वस्व अपर्ण की भूमिका प्रतिष्ठित क्रिया भी स्त्रीकी पुरुषकी अपेक्षा अधिक संवेदनशील होती है । इसीकरण पुरुष की अपेक्षा स्त्रीकी आखोंमे जल्दी आंसू आ

आ जाते है । पुरुषकी अपेक्षा नारी अधिक कोमलभी है । उसकी वृत्तीयाँ में भी फर्क है । सत्व रज तम गुण तैवम्य भावार्य भिन्न है ।

पाश्चात्य महिलायें अधिकस्वतंत्र एवं मनास्विनी होती है । सभी स्वाभिमानी प्रकार अधिक कालसे वहा होनेके कारण व अधिक स्वतंत्र है । इसिलिये कुछ नारियाँ अधिकार तथा प्रभुत्व प्रीय है । कुछमें कुलीपाखंडिक की कछमें यशोप्राभी भावना तो कुछमें फ्राइडका कामवाद या कामवासना की शक्ती संम्मिलित है । कभी कभी वह भावनाकाभी उदात्तीकरण करती है । चीन , जापान, इस्लामी देशोंमें बाला, कुमारी किशोरी युवती प्रौढा वृध्द ये स्त्रियोंकी विभिन्न अवस्थाएं है ।

ना यि का भे द :-

1. मध्यनायिका
2. परकीया
3. सामान्या नायिके व्यवहार दशाके अनुसार भेद आठ है ।

1. स्वाधीन पतिका	2. वासक सज्जा
3. विरहोत्कंठिता	4. खंडिता
5. कलहांतरिता	6. विप्रलब्धा
7. प्रषित प्रिया	8. अभिसारिका

5 से 8 नं. के नायीकाओंमे चिंता-विरवार्य अश्रु, निवशातिता, ग्लानी इ. विशेषताओंका अभाव होता है ।

नारीके स्वाभाविक गुण तथा मनोविज्ञान :-

भरत मुनीने स्त्री स्वभावका वर्णन कई शब्दोंमे किया है। मृदुव्यवहार करनेवाली सदाप्रसन्न रहनेवाली, कोमलस्वभावकी, सदा सबसे भली बात बतानेवाली, लज्जाशील नम्रतासे भरी, सबको प्रीय लगनेवाली, रुप और माधुर्य वाली स्वाभाविक गुणोंवाली गंभीर धैर्य युक्त उत्तम प्रकृती की स्त्री कहलाती है । स्त्रीमें कई ऐक बाद छोटे मोटे गुण भी हो सकते है । वैसी स्त्री मध्यम प्रकृतीकी स्त्री कही जा सकती है ।

अक्रम प्रकृति

अक्रम प्रकृतीकी स्त्री वह है जिसके सकल अक्रम प्रकृतीवाले पुरुषके सकल होते है । सहिष्णुता परतंत्रता ईर्षा, सामाजिकता, सहयोग, धैर्य युक्त वात्सल्यमय भावना, संवेदनशीलता ,लज्जा, इ० नारीके कठोर गुण है । पराधीनताके पाश और नियतीके कठोर बंधनोमें जकडी हुई नारी अपने जीवनकी सुरक्षाकेलिये हेयसे हेय कर्म कर सकती है । पर अपने नारीत्वको बचाती है । क्योंकी वह प्रकृत्याही कोमल हृदयकी होती है । अपने भावुकताका अनुभव वह औरोंके दुःखों भी लेती है । पर दुःखकातरता उसका गुण है । जिसके व्दारा वह पशुता क्रूरता परभी विजय प्राप्त कर सकती है । वह शुभाशुभ , शकुन, अपशकुन, स्वाप्न ज्योतिषपर अटूट श्रद्धा रखती है । पतिकण के अमंगलसे मनमें शंका पैदाकर देती है । नारीकी धर्मभावना पुरुषसे अधिक प्रबल होती है ।

मानव आपने व्यवहारमें चाहे कितनी पार्थक्यकी भावना रखे पर वह अपने विचारमें एकताकी ओर जाती है । सारे वैज्ञानिक नियम और दार्शनिक सिध्दांत अनेनामे एकता और द्वैतमे अभेद स्थापित करनेवाली मनुष्यकी स्वाभाविक चाह की मुक्त संज्ञायका करते है । मनोवैज्ञानिक तंत्री मेंकी रूची वैचित्यपूर्ण कर एवं कुटिल विभीन्न मार्गानिगामी क्रिया ओ भावना ओ और विचार व श्रद्धा ओ की एक मूल प्रेरक शक्तीकी कल्पना भी हो । किसी क्षुत पिपासाको मुख्य माना तो किसीने यशोप्साची वासनाको तो फ्रायडने कामवासनाको मानवव्यापार एक मात्र संचालक शाली माना है ।

व्यापक दृष्टीसे अगर देखो तो स्त्री एवं पुरुष दो भिन्न भिन्न मनोविज्ञान है । २ प्रकारकी विचारधारायें है । वे अेक दूसरेसे दूर रहनेपर अपूर्ण है । शायद उनके अेक दूसरेके सहकार्य से ही जीवनकी पूर्णता है । यौन व्याप र निष्क्रिय होनेके कारण नारी पुरुषके सामने हीन भावनाका अनुभव करनेमें स्वभावत: सुख मानती है १ पतीव्दारा छला पानेपरही पत्नी

पतीपर प्रेम करती है । पुरुषकी अपेक्षा स्वभावतः नारीमें कामवासना अधिक होती है । इन वासनाओंकी पूर्ति के लिये योग्य साधन नही मिला तो विकृत रुप धारण कर लेती है । अनमेल विवाहकी समस्याओंमें मूलप्रश्न यही है ।

नारी पुरुषके इस प्रश्न आकर्षणको कारण माधुर्य, वियोग, विषाद के वातावरण की सृष्टी करता है । क्योंकी आकर्षण और प्रत्याकर्षण ही सृष्टीका नियम है । उत्पत्ती आकर्षण और प्रत्याकर्षणका फल है । पत्नीत्व मातृत्व के गुण को इसी कारण सर्व श्रेष्ठ माना गया है । संसारके दुःख है वो सबसे सच्चे साथीका अभाव पत्नीत्व और पत्नीत्वसे अधीक सच्चा साथ किसका हो सकता है ?

मनोविज्ञानका यह रहस्य है कि सौंदर्य आंखोंको खींचता है । नारीके चक्षुरिंद्रियोंव्दार पुरुषमे आकर्षण पैदा हो जाता है । स्पर्शेंद्रिय तत्वकी नारीकी जो भावना और स्त्रीको जगाने और उत्तेजित करनेमे विशेष सहाय्यक होता है । स्पर्शत्वमें होनेवाला फर्क नारी तुरंत जान लेती है । मातृत्वकी प्रबल भावना भी नारीकी सबसे प्रबल भावना है जो नारीत्वकी चरम सीमा मानी जाती है । नारीके जीवनमे यह मातृत्वकी भावना केवल अपने बच्चेके प्रति नहीं होती तो औरोंके बच्चोंसे भी वह प्यार करती है । तथा ममता करती है ।

प्रेमकी तरह इर्षा भी नारीका स्वाभाविक गुण है । फ्राइडके अनुसार नारी स्वाभावमें व्याप्त ईर्षा तथा द्वेष भावना पुरुषोंकी अपेक्षा उसके मानसीक जीवनमें प्रभाव डालती है । प्रेमपूर्ती यह स्वाभिविक पूर्ती है । इसके अपूर्णतापर मनुष्यके मनमें कॉम्प्लेक्स ग्रंथियोंका निर्माण होता है । परिणाम स्वरुप विद्रोही रुप धारण हो जाता है । कभी कभी अति प्रेम के कारण ईर्षाभी पैदा हो जाती है । पतिपत्नीका एकनिष्ठ प्रेम और कोई भागीदार नाही यह सोचना मानव का स्वभावही ऐसा है कि, जो चीज अपने पास ना हो उसके लिये दुःख करना जो कमजोर मनके होते है, ईर्षा करते है ।

हमारे भावनाओंकी ग्रंथीया प्राय: भाव वृत्तीयोंका स्थायित्व ग्रहण कर लेती है। इनके आंतरिक संघर्ष के कारण कुछ पेचिदगी उलझन आ जाती है तब प्राय: संघर्षके शमन और सुलझानेके लिये दो परस्पर विरोधिनी वृतियोंमेंसे एकका दमन हो जाता है। अथवा हमारे व्यापक स्वभावसे संबंध रखती है। उनकी ही प्राय: विजय होती है।

आधुनिक समाजमें सबसे अधिक दु:खदायी वस्तु है मनुष्यका अहम। अहम भावका ठेस लगनेसे उत्पन्न होनेवाली पीडा संसारका सबसे बडा कष्ट है। अप्रसन्नता, निराश, मलिनता, इ० किसी न किसी कुंठाके कारण उत्पन्न होते है। ग्रंथीयोंका के गुप्त प्रभावसे मनुष्य बारबार कुछ प्रक्रियो भी करता है। कुछ लोगोंकी अहंभाव एक ग्रंथि-सी बन जाती है। कुछ लोक उनमें श्रेष्ठता स्थान करनेकी चेष्टा करते है। ऐसे लोग अपनेको सर्वगुण संपन्न मान लेते है। कईबार ये प्रतिशोध की भावना बन जाती है।

संघर्ष मन :-

मानवी जीवन संघर्षमयी है। यह संघर्ष आंतरिक एवं बाहरी स्वरूपका होता है। बाह्य संघर्षके अतिरिक्त व्यक्तीके भीतरभी उसकी आकांक्षा, अभिलाषा ओमें और मनोवृत्तीयोंमें संघर्ष चलता रहता है। हमारे विभिन्न अंग और व्यक्तीत्व एक दूसरेका सामना प्रस्तुत करनेको तैयार हो जाते है। "रात्रंदिन आम्हा युध्दाचा प्रसंग" तुकाराम के अनुसार प्रतिकूल कामिनी मनोवृत्ती यों का संघात हमे झकोर डालता रहता है और ऐक मानसिक तुफान खडा हो जाता है। इन अंतव्दंदों को हमी भूलको घोर अशांतिका सामना करना पडता है। दो भीन्नभीन्न मार्गोंमेंसे किसी एकपर चलनेको बाध्य होता है। इस बजपर किसे अपनाये किसे छोडे यह एक अकलनीय व्दंद मनमें होता है। वह सोचता है की इस बातसे हानी- लाभ फायदा, नुकसान होगा। ऐसा पाश भीतरही भीतर चलता है। दूसरोंकी उसका

निर्णय अयोग्य भी कुछ निश्चय या निष्कर्ष पहुंचनेके पहिले वह मनमें और संघर्ष जीवीत करनेका विचार करता है। कभी कभी बुध्दी और हृदयकाभी संघर्ष होता है। हृदय मोहपेक्षा एवं बुध्दी कर्तव्यपेक्षा होती है। लेकिन हमेशा कर्तव्य पक्षका ही विजय होती है।

कभी कभी एक भाव वृत्ती 2 रे भाववृत्तीसे टकराती है जो अंतर्व्दव्दके परिचायक होते है। अंतर्व्दव्दमें जिस पक्षकी विजय होती है वह पक्ष प्रबल ठहरता है। विशिष्ट अभिलाषाओंका चुनावभी करना पडता है।

मानव और मनोविज्ञानकी आजकालके नाटकोंमें यथार्थवाद लानेका प्रयत्न कई किया है। मानव अपने युगकी आर्थिक और सामाजिक परि-स्थितीयोंके बन्धमें रह सकता है। परिस्थितीयोंका एवं मनोविज्ञान का बडा गहरा संबंध है। परिस्थितीयाँ बदलती रहती है। इसीकारण मानवभी बदलता रहता है। कार्य व्यापारभी बदलते रहते है। जिंदगीके प्रवाहमें बहते मानवोंके साथ हर दिन बदलता रहा है। मानवी मन बदलता रहा।

20 वी शताब्दीके ज्ञान वृक्षकी सबसे नवज्वान तरुण, स्फूर्त तथा लचिली शाखा मनोविज्ञानकी है। वह कुछ लेना और देना चाहती है। अनेक प्रकारके समस्याओंका निराकरण करनेकी शक्ती उसमें है। चाहे वो फिर परिवारके झगडे क्यों ना हो चाहे मनका संघर्ष क्या ना हो ? मनो विज्ञानका नेतृत्व उसमें होता ही है। यदि फ्राईड, एडलर, युंग के साथ साथ तुलसी सूर, प्रेमचंद, तथा प्रसाद के साहित्यकी व्याख्या की है। मनकाभी विचार किया है ? मानवके कुछ अलौकिक अंग है उन्हें मांगकर सत्यके लिए तिमिरमा कुल कुछ अंगकी उद्भरित क्यों ना करे ? मानवी मन निबीड अंधःकारसे व्याप्त है। प्रकाशकी एक चिनगारी उसे इससे मुक्ती दिला सकती है। फिर उसका प्रयत्न क्यों ना किया जाय ?

5] भविष्य कालीन नारी :-

नाटकमे अभिव्यक्त नारीरूप तथा भविष्यकालका प्रेरणा

साहित्य सौंदर्यके माध्यमसे मानव जीवनमें आनंद होता है । नारी की इसी प्रकार नारीभी अपने व्यक्तीत्व व्यवहारकी रमणीयतासे जिवनमें मौसम देती है । वह जिवंत कविता है , मानवी संस्कृतीकी व्यवस्था तथा साहित्यकी प्रेरणा भूमि है । विश्वकला कारने सबकुछ बनाया है । पर संपूर्ण मोहक उपकरणोंमें सौंदर्य साध्य करनेके लिये नारीकी रचना करके सासि सि नारी 26 रुपमदी है भिहूरसे जितनी अधिक उपरसे उतनीही कम । परमेश्वर स्त्रीके निर्मीती समयपर कलाकर हुआ । रंग और तुलिका ही हाथों रखी । विधाताकी अनूठी कला बन बैठी र जीवनकी चिरंतन ज्योति बनकर प्रेरणा एवं शीलकी ~~जवेल=बक~~ प्रतिमूर्ती तथा उल्हास आनंद का एक केंद्र बिंदु रहा है । सभी प्रदेशों साहित्यमें वह चेतनात्मक सहायक मानी गयी ।

नाटकमें अभिव्यक्तनारीका सम्यक रूप ?

नारीका विराट व्यक्तित्व अनिर्वचनीय आनंद एक सौंदर्य संगीतका एकांत आश्चर्य है । इसमें सत्य शिव सुंदर सुकुमार तत्वों और सत्तत्वोंका संयोग है । नारीका सत्य शिव सुंदर रूप नाटकमें दिखता है । प्राय: सभी नाटककारोंने नारीको करुणामूर्ती दया क्षमा शांतीकी त्याग सेवाभावनाओंकी साक्षात प्रतिमा माना है ।

नारीका हृदय एक विशेषप्रकारकी कोमलता है । पर कभी तो वह संसारभरमें घोर अयापी कर डालती है । अपने संतानकी कोमलभावनाका नाश करती है । जिस से वह कभी राक्षसी बन जाती है ।

सच्ची कोमल होनेके बावजूदभी वह केवल कोमल नहीं होती । इसमे आशा विश्वास और त्यागकी शक्ती होती है । इन्ही शक्तीयोंके व्दारा वह जीवनको स्वर्ग बनाती है । इसीलिये लाल अरण ने अक्षमताको,उदारतासे

सभ्यत्वको देवत्वमें अवीत्वाको सभ्यतामे, पापको पुण्यमें परिवर्तित करनेका भार उसपर है । पुरुषकी खातिरही समर्पणकर भावनीबार जिसने त्याग करना बंद किया तो जातल करता फैलेगीर

पुरुष यदी तृष्णा है तो नारी तृप्ती नारी कोमलता के साथ साथ निष्ठुर भी है । क्षमिस्मूर्ती प्रेममूर्ती के बीतके नारी कुछभी कर सकती है । नारीका विचार रगरगमे घुष जाता है । पुरुषका विचार सिर्फ मटिकष्कामें होता है।

नारी सबके साथर अलके स्पोंमेभी होती है । वह अ जैसी सरिता है जिसके दोनो किनारोपर संस्कारका पापपुण्य उतरा है । अेक आखसे स्नेह तो एक आंखी घृणा बहती है । यह निष्ठुर भी है प्रेम मयाभी है ।

लेकिन यह दास्यता नारीके लिये योग्य नही, इसीतरह पाश्चात्य नारीओंका अनुकरणभी अयोग्य है । आखिर नारी क्या चाहती है ? दास्यताकी अमर्याद स्वातंत्र्य ।

नारीका जीवन अर्थात त्याग प्रेम के कर्तव्यके लिये कर्तव्यके प्रेमके लिये नारी अपने प्रोणोंकोभी त्याग देती है । वह औरोंकेलिये हंसती है, उनके लिये रोतीहै । पुरुषके पेरोमेंही आनंद मानती है ।

" अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी आँचलमें है दूध और आंखोमे पानी " आंचलका दूध ही दान-त्याग एवं ममत्वको व्यंजित करता है । समर्पण एवं अभाव से वह हृदयपर शासन करती है । पुरुषकी आततायी वृत्तिपेहा स्निग्ध कोमल शब्दोंसे आंखोकेलिये प्रेममय शासन वह करती है ।

पुरुषके सुखे दिलमें संगीत भर कर दुखे हुये मनको बहलाती है । संतप्त पुरुषको प्रेमकी शीतल छाया देती है । वह पतीगामी होती है । नारी क्षण कालकी पत्नी और अनंत कालमी माता होती है " ।

जीवनमें संपादित सद्गुणोंकी परंपरा चिरकाल रखनेकी जिम्मेदारी नारीमें स्वयं पर ली है । मातृपदका सम्मान स्त्री को ही है तो क्या कुलका नेतृत्व पुरुषको देना चाहिये ? पुरुष बाहरी और स्त्री अंतरीक बातोंको देखती है ।

हर देशकी शक्ती नारीपरही अवलंबीत है ।भारतमाता के नामसे नारीका गौरव है , शोभा है, विशेषण है । इसीनारी भावनाके मानवको ठावनिमणिक, नवयुगीत, निर्णायक आलोक दिया । स्वदेशका शाश्वत स्वरूप तथा आकार किनार, सडी डुबी रुढियोंसे तथा पाश्चात्योंके भडकभावकी केऊ चमक दमक से नष्ट होनेवाली नारीने जीवनको अपने सफल प्रेम जलसे सिंचीत कर सच्चा स्थान सच्चे कर्तव्यका ज्ञान दिया समन्वय समरसता, समता का मार्ग नारीने प्रदर्शीत किया । इसीने युगका नया उत्थान संभव किया है । जिसमें क्रांती छिपी है । नारीके अभ्युदय बिना भारतका कल्याणभी असंभव है । क्या पंछी एकही पंखसे उड सकेगा ?

" नारी तुम केवल श्रद्धा हो
विश्वास रजत नग पगतलमें
पियूष स्रोतसी बहा करो
जीवनके सुंदर समतलमें
नारी तुम इस धरतीपर
सुख बरसाने आई हो
सब जीनेका संबल
संगीत साथ लाई हो ।।